



मुनि श्रीसुशीलकुमार

## भिक्षु जमाली और बहुरतदृष्टिवाद

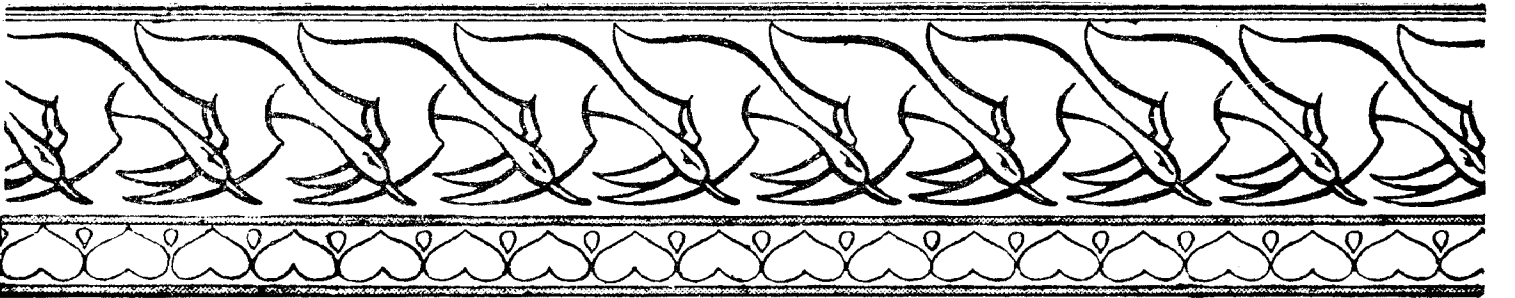
भगवान् महावीरके युग में, सत्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ सोचा गया। वह एक चिन्तन-प्रधान युग था। विचारकोंने विचार की मौलिकता के नाते अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था। विचार एक बहुत बड़ी शक्ति है। विचारकों के बल से हम मनुष्य के सोचने के ढंग को और सिद्धान्त स्थापित करनेवाले दृष्टिकोण को इस प्रकार व्यवस्थित कर देते हैं कि बुद्धि की सही समझ और स्फुरणा से उठे हुए भावावेग वास्तविकता का रूप ले लेते हैं। जीवन और जगत् के प्रति जितनी हमारी धारणा है वह सब विचारकों की देन है। हमारे विश्वास और हमारी श्रद्धा हमें अपने सम्बन्ध में और जगत् के सम्बन्ध में स्वरूप निर्धारण करने में एक मात्र सहायक होती है।

भगवान् महावीरने आत्मा को और इस सारे जगत् को स्याद्वाद की दृष्टि से, नय और निक्षेपके वर्गीकरण से व भेद और अभेद दृष्टि से सोचा है। इसी तरह भगवान् बुद्ध ने, पूर्ण काश्यप ने, प्रबुद्ध कात्यायन ने, मंखली गोशाल ने और संजय वेलट्ठी-पुत्त ने भी इस जगत् के सम्बन्ध में अपने-अपने ढंग से विचार किया है। वह हमारे राष्ट्र का स्वर्ण-युग था। उस काल में मौलिक विचार और मौलिक दर्शन हमारी संपत्ति बन रहे थे। विचारों की दृढ़ता और आचार की निष्ठा उस युग की अस्मिता बन गई थी।

जमाली उसी जमाने के ऋषि हैं। भगवान् महावीर के वे अनन्यतम शिष्य थे। सांसारिक सम्बन्ध में वे बहन के पुत्र होने के नाते भानजे लगते थे। और स्वयं भगवान् महावीर की सुपुत्री का परिणय भी उन्हीं के साथ हुआ था, इस नाते भगवान् महावीर के जामाता भी थे। वैराग्य-भाव के साथ जमाली ने ५०० राजकुमारों और सुदर्शना ने १००० सखियों के साथ भगवान् महावीर के पास दीक्षा धारण कर ली थी। भगवान् महावीर के केवल-ज्ञान के चौदह वर्ष बाद श्रावस्ती के तैदुकवन में यह चर्चा उठी थी, जिसको हम बहुरतदृष्टिवाद कहते हैं।

जमाली, श्रमण भगवान् महावीर से अलग हो कर तैदुकवन में विश्रामार्थ गये तो उन्होंने अपने शिष्यों से कहा, कि मेरा शरीर रुग्ण है, बहुत जल्दी मेरे शैयासन को बिछा दो। दर्शन का प्रारम्भ जीवन की बहुत छोटी-छोटी घटनाओं से हो जाया करता है। मालूम नहीं कब सत्य या सत्याभास हमें प्राप्त हो जाये और उसके पीछे हम अपना सर्वस्व लगा दें। ऐसी ही स्थिति जमाली की हुई।

आसन बिछाने की आज्ञा देने के बाद जमाली ने अपने शिष्यों से पूछा : 'मेरा आसन बिछ गया?' शिष्यों ने कहा : 'हां'। उनकी स्वीकारोक्ति के बाद जमाली जब बड़ी अधीरता के साथ पहुँचे तो देखा कि आसन अभी बिछ रहा है। जमाली ने कहा : 'सत्य का व्रत लेने वाले साधक इतना असत्य नहीं बोल सकते। आसन जब तक पूरी तरह बिछा नहीं, तब तक बिछे होने की बात कैसे कह सकते हैं?' शिष्यों ने कहा : 'श्रमण भगवान् महावीर का यह सिद्धान्त है कि 'चलमाणे चलिण' और अन्त में 'निज्जरमाणे निज्जरिण' इसके अनुसार जिस काम को हम कर रहे हैं, उसको कर चुके, ऐसा हमें मानना चाहिए।' जमाली कहने लगे : 'जब तक काम पूरा न हो जाय, जब तक क्रिया उद्देश्य को परिपूरित न कर दे, तबतक हम



ऐसा नहीं कह सकते कि वह काम हो गया, अगर कहते हैं तो उसमें असत्य लगता है।<sup>१</sup> बस इतनी-सी बात पर चर्चा चल पड़ी। भगवान् महावीर का सिद्धांत और जमाली का तर्कवाद दोनों एक दूसरे के विरुद्ध मोर्चा बना कर खड़े होगए। जमाली के साधुओं में और सुदर्शना की साध्वियों में यह चर्चा चल पड़ी कि जमाली का कथन सत्य है या भगवान् महावीर का! सुदर्शना जमाली के सिद्धांतका समर्थन करने लगी। किन्तु कुछ समय पश्चात् ही एक ऐसी घटना घटी कि जिससे उसे अपनी भूल का पता चल गया। ढंक नाम के प्रजापति के यहां ठहरने का अवसर प्राप्त हुआ। ढंक जमाली के इस सिद्धांत का विरोधी था और भगवान् महावीर के 'चलमाणे चलिए' सिद्धांत का उपासक था। उसने उसके सामने अग्नि का एक शोला महासती सुदर्शनाकी साड़ी पर गिरा दिया। गिरते ही सुदर्शना चिल्ला उठी : 'मेरी साड़ी जल गई। तब ढंक ने कहा : 'आप जमाली के सिद्धांत को मानने वाली हैं, जब तक क्रिया की अन्तिम परिणति न हो जाय, तब तक आप यह नहीं कह सकतीं कि साड़ी जल गई, क्योंकि शोले ने साड़ी नहीं जलाई, अभी तो इसका एक हिस्सा ही जला है। आपने कैसे कह दिया कि साड़ी जल गई। बात तो व्यवहार की थी पर उसका असर मन पर हो गया और जमाली के सिद्धांत को एक आग के छोटे से शोले ने तथ्यहीन कर दिया। सुदर्शना के साथ अन्य साध्वियाँ भी महावीर के संघ में जा मिलीं। बहुत साधु भी जिनके मन में जमाली के सिद्धांत के प्रति आस्था नहीं हुई, भगवान् महावीर के श्रमण-संघ में चले गये, किन्तु जमाली अपनी बात पर डटे रहे और उनके लगातार चिन्तन ने बहुतरतदृष्टिवाद को जन्म दिया।

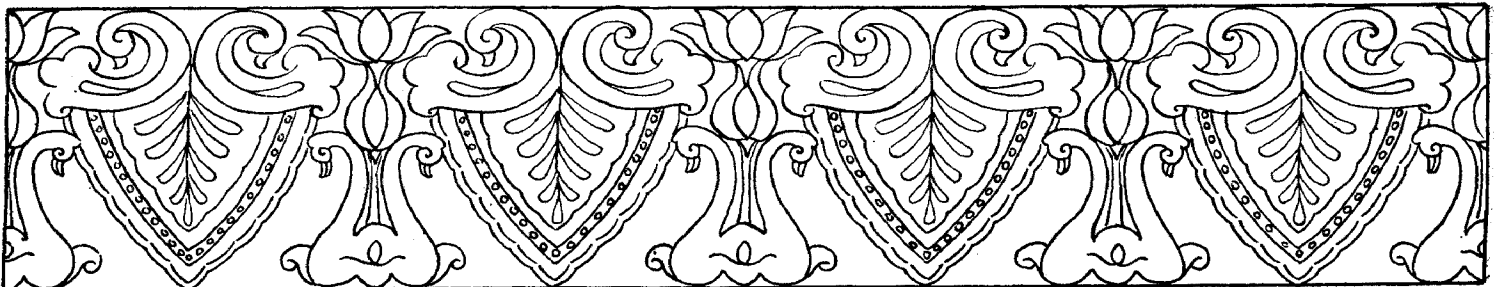
व्यवहार का बहुत-सा सम्बन्ध जमाली के सिद्धांत से जुड़ा है। हम भोजन कर रहे हैं तो ऐसा नहीं कह सकते कि भोजन कर चुके। हम जा रहे हैं तो ऐसा नहीं कहते कि हम जा चुके हैं। हम लिख रहे हैं तो ऐसा नहीं कह सकते कि हम लिख चुके हैं अगर कहते हैं तो व्यावहारिक दृष्टि से सत्य उसके साथ नहीं रहता। जमाली ने अपने बहुतरतदृष्टिवाद की सिद्धि के लिए जितने तर्क दिए हैं वे सब व्यवहार से लिए हैं। बहुतरतदृष्टिवाद का अर्थ यह है कि उद्देश्य की परिपूर्णता में जब हम सफल हो चुके हों अर्थात् बहुतांश या सर्वांश में जब हम क्रिया पूर्ण कर लें तभी हमें किसी कार्य को 'किया हुआ' कहना चाहिए। यही जमाली का दर्शन था।

वाणी सत्य के किनारों से सट कर चल सके, इस पर बड़ी शोध हुई है। यद्यपि वाणी और सत्य को अर्थात् यथार्थ और भाषा को आपस में जोड़ने की क्षमता पूर्णता से मनुष्य को प्राप्त नहीं हुई है। भाषा इतनी निर्बल और शक्तिहीन है कि वह अपने मन में उठने वाले किसी गंभीर भावावेग को अभिव्यक्ति नहीं दे सकती। गुड़ खाने के बाद गुड़ का स्वाद बताने का सामर्थ्य हमारी भाषा में नहीं है, 'गूंगे का गुड़' लोकोक्ति से आप यह मत समझ लीजिये कि गूंगा ही गुड़ का स्वाद नहीं बता सकता अपितु संसार का कोई भी व्यक्ति नहीं बता सकता। सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि जब हम सत्य बोलने की प्रतिज्ञा लेते हैं उस समय जितनी सरलता प्रतीत होती है, उतना बोलने में सत्य को स्थापित करना आसान नहीं होता है।

जमाली सत्य के पक्षपाती थे, और सत्य की पूर्ण रक्षा के विचार से ही उन्होंने बहुतरतदृष्टिवाद की स्थापना की। जीवन के अन्त तक वे इसी बात पर डटे रहे। किन्तु भगवान् महावीर के अकाट्य तर्कों और गहराइयों से प्राप्त हुए अनुभव के मोती इतने वास्तविक थे कि उन्होंने बहुतरतदृष्टिवाद को स्थापित नहीं होने दिया।

भगवान् महावीर का कथन था कि लोग समय की सूक्ष्मता को और क्रिया की तीव्रता को पहचान नहीं पाते हैं। काल का सबसे छोटा हिस्सा, जिसके हम टुकड़े न कर सकें और जिससे और लघुतम काल की कल्पना न कर सकें, एक 'समय' कहा गया है। 'समय' को समझाने के लिये किसी भी दृष्टांत के द्वारा 'नेति-नेति' प्रक्रिया का ही अवलम्बन लेना पड़ता है। भगवान् महावीर कहते हैं कि आँख की पलक गिरा देने मात्र में अक्षुण्णत समय बीत जाते हैं। 'समय' कितना सूक्ष्म है, इससे आप अनुमान लगा सकते हैं। फिर आवलिका, श्वासोच्छ्वास, प्राण, स्तोक, लव, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, सहस्रयुग, पूर्व, शंकु, महापञ्च, निखर्व, त्रुटितांग और शीर्षप्रहेलिका तक की गणना तो और भी विस्तृत है। यह सब गणना भी समय को नापने में असमर्थ है।

१. विस्तार से जानने के लिए देखिए विशेषावश्यकसूत्र — गा० २३०६ से २३३२



कोई बलिष्ठ नवयुवक अपने बलिष्ठ हाथों से जब वस्त्र काटता है तो जमाली के अनुसार जब तक वह पूरा वस्त्र न काट ले तब तक वस्त्र काटा हुआ नहीं कहा जा सकता। किन्तु भगवान् महावीर कहते हैं कि वस्त्र काटने की प्रथम क्रिया जितनी हो चुकी है, जिसमें कितने तन्तु कट चुके और एक तन्तु में कितने रेशे, और एक रेशे में कितने रज-कण और हर रज में कितने परमाणु प्रदेश, उन सबको काट कर के ही वह व्यक्ति उस वस्त्र के मध्य तक पहुँचा है। अगर आप कहें कि पहला तन्तु जो उसने काटा और पहले तन्तु में रहे हुए लक्ष्यावधि रजकणों को काटा, वह सब काटा हुआ नहीं माना जा सकता, तो समूचे वस्त्र का काटना भी आप कैसे मानेंगे ? क्योंकि वही क्रिया काटने की पहले समय भी हुई और अन्तिम समय में भी वही काटने की क्रिया की गई। कोटि-कोटि तन्तुओं के रजकणों को काटने को काटना हम नहीं मानें और जिनको हम काट चुके हैं उनको हम काट रहे हैं, कहें तो क्या यह सत्य के निकट होगा ?<sup>१</sup> आप भोजन कर रहे हैं, लेकिन आप जो ग्रास खा चुके और उस एक ग्रास में कितने बीज और उस बीज में रहे हुए कितने रज-कण, हर रजकण में कितने परमाणु-प्रदेश को खा चुकने पर भी आप खा रहे हैं। यह कैसे कहेंगे ? यही उदाहरण आप चलने पर घटाइये, अनुभव पर घटाइये, मरने पर घटाइये, छेदन करने में, भेदन करने में घटाइये अथवा किसी पर भी घटाइये। आपको इस सत्य का दर्शन होगा कि आप जिसे काट रहे हैं, उसको काट चुके हैं, चल रहे हैं वो चल चुके हैं। अनुभव कर रहें हैं, वो कर चुके हैं। अगर इसे व्यवहार में घटाना हो तो एक बड़ा सीधा उदाहरण है। कोई व्यक्ति अपने घर से अमरीका के लिये चल पड़ता है, और थोड़ी देर बाद उसका कोई मित्र आकर पूछता है कि वह कहाँ गया ? आप कहते हैं—अमरीका गया। बेशक वह अभी रास्ते में ही हो, या चल रहा हो परन्तु इस बात को सुनने के बाद भी आपके कथन को कोई असत्य नहीं कहता। जब कि उद्देश्य के नाते वह असत्य है।

अमरीका जाने के निमित्त घर से चल पड़ने का नाम ही अमरीका जाना मान लिया, यह क्यों ? इसलिए कि यह एक व्यवहार है। उद्देश्य के नाते यह कथन सर्वत्र असत्य नहीं है। किन्तु कर्मवाद के क्षेत्र में जब हम भगवान् महावीर के सिद्धान्त को घटायेंगे, केवल-ज्ञान की प्राप्ति और महा-परिनिर्वाण की अवस्था में इसे लागू करेंगे तो हमें भगवान् महावीर के इस सिद्धान्त की सच्चाई का दर्शन होगा।<sup>२</sup> जैसा कि भगवती सूत्र में भगवान् ने कहा है कि : प्रथम समय के चलित कर्म अथवा आदि समय में चलित कर्माश को उत्तर समय की अपेक्षा चलित मानना। उदय में आए हुए कर्म-दलिक के अनुभव को असंख्यात समयवर्ती उत्तर समयों की अपेक्षा वेदित मानना। भोगते हुए कर्मभोग को मुक्ति मानना। जीव-प्रदेश हे कर्माश को प्रहाण करते हुए प्रहीण मानना। छेदन होते हुए कर्माश को छिन्न, भेदन होते हुए कर्म के रसास्वाद को भिन्न, दग्ध होते हुए कर्माश को दग्ध, नष्ट होते हुए आयुष कर्माश को मृत और निर्जरित अर्थात् अपुन-भवि रूप में क्षय करते हुए कर्माश को निर्जरित मानना ही सिद्धान्त के अनुकूल है।

सत्य की गहराई और कर्मबन्ध की विलक्षणता, केवलज्ञान की उत्पत्ति और निर्वाण की प्राप्ति के सारे पहलुओं को समझ लिया जाय तो हम इन एकार्थक और भिन्नार्थक वाक्यों की सच्चाई को सही रूप से जान सकते हैं। अगर हम समय की सूक्ष्मता में विश्वास करते हैं, क्रिया की तीव्रता को मानते हैं और स्कन्ध, देश, प्रदेश के सारे पदार्थगत सूक्ष्म तन्त्रात्मक, हिस्सों के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, तो भगवान् महावीर के सिद्धान्त को माने बिना किसी तरह भी सत्य हाथ नहीं लग सकता। सत्य के प्रति तीर्थंकर भगवान् कितने जागरूक थे और कितनी गहराई से उन्होंने हमारे सामने इस सत्य का प्रकाश अनाव्रत किया है, उसके लिये युग-युग तक हम उनके कृतज्ञ रहेंगे। यह स्वाभाविक है, किन्तु जमाली श्रमण के इस उपकार को हम नहीं भुला सकते कि अगर वह बहुरतदृष्टिवाद के आग्रही सिद्धान्त को स्थापित न करते तो हमें भगवान् महावीर के सत्य-सिद्धान्त को समझने में अवश्य कठिनाई अनुभव होती। ★

१. अनुयोगद्वार सूत्र.

२. चल माये चलिए ?, उदीरिज्जमाये उदीरिए ?, वेइज्जमाये वेइए ?, पहिज्जमाये पहीये ?, छिज्जमाये छिन्ने ?, मिज्जमाये भिन्ने ?, उज्जमाये दड्ढे ?, मिज्जमाये मडे ?, निज्जरिज्जमाये निज्जिए ?